International Journal of Applied Research 2018; 4(2): 46-47

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2018; 4(2): 46-47
www.allresearchjournal.com
Received: 26-11-2017
Accepted: 15-01-2018

प्रीति प्रिया
शोधार्थी, विश्वविद्यालय, इतिहास विभाग, ल.ना.मि.वि., दरभंगा, बिहार, भारत।

Corresponding Author:
प्रीति प्रिया
शोधार्थी, विश्वविद्यालय, इतिहास विभाग, ल.ना.मि.वि., दरभंगा, बिहार, भारत।

मिथिला में मातृत्व एवं शाक्त धर्म एक अध्ययन

प्रीति प्रिया

सारांश
शक्ति अथवा मातृतत्त्व की उपासना ही शाक्त धर्म है। जो इस सृष्टि की उत्पत्ति अथवा अभिव्यक्ति का मूलभूत कारण है। शक्ति सामान्य रूप से ''मातृदेवी'' का अभिव्यंजक है और किसी देवता विशेष की ऊर्जा का द्योतक रहा है। विभिन्न कालों में ''शक्ति'' शिव की अर्द्धाङ्गिनी के रूप में पूजित होती रही है, जिनमें ''देवी दुर्गा'' काली प्रमुख रूप से ज्ञात रही है। शाक्त साधक इसी शक्ति के सानिध्य और कृपा द्वारा अलौकिक सुख एवं आनन्द की प्राप्ति करता है तथा अपनी सांसारिक कठिनाईयें एवं शत्रुओं का संहार एवं विनाश करता रहा है। कुछ लोगों ने शाक्त धर्म को शैव धर्म का ही एक अंग माना है। लेकिन यह एक स्वतंत्र सम्प्रदाय एवं मत के रूप में रहा है, जिसमें मातृत्व की प्रधानता रही है। ऐतिहासिक दृष्टिकोण में शाक्त धर्म, आर्य एवं अनार्य संस्कृति तथा उनकी मान्यताओं के मिश्रणोपरान्त प्रतिफलित हुआ है।

प्रस्तावना
भारत में मातृपूजा (शक्ति–पूजा) का इतिहास काफी प्राचीन है। सिन्धु–युगीन मुण्ड –शिल्प के पर्यालोचन से तत्युगीन संस्कृति में से शक्ति धर्म के मूलभूत आधार मातृपूजा के अवशेषों को खोजा जा सकता है। मोहनजोदड़ों एवं हड़प्पा की खुदाई से प्राप्त अनेक स्त्री मूर्तियाँ मातृदेवी की श्रेणी में रखी जा सकती है। प्राप्त मृणमयी मूत्तिर्यों में यदा–कदा वक्ष अथवा उस पर विशेष उभार दिखाया गया हे। मातृत्व के इन लक्षणों के आधार पर ऐसी मूर्त्तियों को पुरातत्वविदों ने मातृदेवी की प्रतिमायें मान्य किया है। यद्यपि यह कहना कठिन है कि मातृत्व लक्षण केवल सामान्य थे अथवा देवत्व बोध में समन्वित थे। किन्तु इस संबंध में यह ज्ञातव्य है कि प्राचीन सभ्यताओं में मातृदेवी की पूजा सर्वत्र व्याप्त थी। [1]
यूरोपीय विद्वान् जान मार्शल का कथन है कि मोहनजोदड़ों एवं हड़प्पा के उत्खनन से मातृदेवी की मूर्त्तियाँ प्राप्त हुई है, जिसे शक्ति पूजा के रूप में मान्य किया जा सकता है। [2] सिन्धु सभ्यता में पाई जानेवाली देवी की मूर्तियों के समान ही विभिन्न देश जिसमें मेसोपोटामिया, एशिया माइनर, सीरिया एवं बल्ख आदि देशों में भी ये देवी मूर्तियाँ प्राप्त हुई है। [3] पुरातत्त्ववेत्ताओं ने ताम्रयुगीनसंस्कृति के अन्य केन्द्रों से प्राप्त मृण्ड स्त्री प्रतिमाओं के मातृ देवियों की मूत्तियाँ माना है। [4]
हड़प्पा से प्राप्त एक मोहर पर योनि मार्ग से अंकुर निकल रहा है, जिसे मातृ रूप में पृथ्वी माना गया है। मुहर पर अंकित योनि भाग से अंकुर का निकलना शक्ति के सृजनात्मक रूप को प्रस्तुत करता है। [5]
सिन्धु सभ्यता युगीन संस्कृति में स्त्री प्रतिमाओं की बहुलता तत्युगीन समाज में मातृ सत्तात्मक भावना एवं उसके धार्मिक वैशिष्ट्य को घोषित करता है।
सिन्धु युगीन संस्कृति मातृसत्तात्मक मानी जा सकती है। उस युग में देवी को आर्येत्तर या अवैदिक भी कहा जा सकता है। यह भी प्रायः निःसंदेह सत्य है कि मातृपूजा का क्रम आदिम जातियों में अवश्य था। यह मातृपूजा केवल भारत में ही प्रचलित नहीं थी, अपितु उन सभी प्रदेशों में इसके प्रमाण प्राप्त होते है, जहाँ–जहाँ पर प्राचीनकालीन संस्कृति के अवशेष प्राप्त होते हैं। महाभारत [6] एवं हरिवंशपुराण [7] एवं अन्य पुराण भी यही दर्शाते है कि प्राचीनकाल में भारत के विभिन्न भागों में अनेक स्त्री–देवताओं की पूजा होती थी। आर्यो के साथ–साथ शवर और पुलिन्द आदि जातियाँ भी देवी की पूजा करते थे। [8] ये सभी स्त्री देवता प्रायः दिव्य माताओं के रूप में प्रकट होती है। वे पुरूष देवताओं की पत्नी के रूप में भी पूजी जाती रही है। किन्तु कन्या रूप में सर्वाधिक महत्वपूर्ण रही है। ये देवियाँ प्रायः पर्वत शिखरों को ही अपनी क्रीड़ा स्थली बनाती रही है और सभी मातृकाओं की उत्पत्ति का हेतु है।

देवी का वर्णन तैत्तरीय अरण्यक एवं महाभारत में मिलता है। इस देवी का संबंध अधिकतर हिमालय से रहा है। विन्ध्वासिनी देवी भी सभी स्थानों पर कुमारी के रूप में पूजी जाती रही है। ऐसा माना जाता है कि आदिम जातिया मातृ प्रधान होती थी, और इसी कारण से मातृपूजा उन जातियों में प्रचलित होती चली गई। ये जातियाँ अधिकतर पर्वतों, अरण्यों एवं निर्जन प्रदेशों में निवास करती थी और अपनी मातृ देवता की पूजा भी वहीं पर करती थी।

वेदों में शक्ति विषयक अवधारणा : ऋग्वेद में शक्ति का स्वरूप–

प्राचीन काल से ही मानव प्रकृति के प्रति आस्थावान रहा है। प्रकृति के उपादान तत्व जो आदिम अवस्था में मानव के अनकुल बनाये रखने का प्रयास किया। मानव प्रवृति से लाभान्वित होकर उसे देव स्वरूप मानने लगा। अतः आकाश, पृथ्वी, पर्वत, नदी और पौधों तक की उपासना दिव्य शक्तियों के रूप में प्रारंभ हुई। आर्यो का विश्वास था कि देवताओं की सहायता सें हमें शत्रुओं पर विजय प्राप्त होगी, और हमारे सब दुःखों तथा पापों का निवारण होगी। पूर्व वैदिक काल तक जिन प्रकृति तत्त्वों की देवताओं के रूप में कल्पना हो चुकी थी वे निम्न प्रकार है।

आकाश के देवता :

दयाः, वरूण, मित्र, सविता, विष्णु, पूषा, अश्विण, उषा, चन्द्र और रात्रि।

अन्तरिक्ष के देवता :

इन्द्र, अपान्वत्, वायुष जन्मुआपः, रूद्र और मरूत।

पृथ्वी के देवता :

मृभू, गन्धर्व, अप्सरा, वन, वृक्ष आदि। ऋग्वैदिक देवी–उपासना में देवों की अपेक्षा देवियों का गौण रूप में प्राप्त होता है। परन्तु स्त्री लिंगी शक्तियों का उल्लेख हुआ है। ऋग्वेद में प्रत्येक देव के साथ उसकी शक्ति संलग्न है। देवियों का चाहे पृथक् उल्लेख हो या न हो, परन्तु जहाँ देव है, वही उनकी शक्तियाँ भी है। शक्ति से ही देव सशक्त होते है। ऋग्वेद में देवियों का उल्लेख प्राप्त होता है। ऋग्वेद में देवों की मातृ शक्तियाँ प्रसन्न होकर हमारी रक्षा करें।

जो देवियाँ पार्थिव है और अन्तरिक्ष चारिणी है वे सब हमारी प्रार्थना को शीघ्र सुनकर हमारा कल्याण करें। देव शक्ति या इन्द्राणी, आग्नेयी, अश्वियों की विराजमान पत्नी अश्विनी, रूद्राणी और वरूणानी सर्वतः श्रवण करें और हवि ग्रहण करें। [9]

ऋग्वैदिक देवियों में देवों की असीम माता अदिति है और उसके अतिरिक्त सत्य चेतना की पाँच शक्तियाँ भी है जो इस प्रकार है– मही अथवा भारती, इला, सरस्वती, सरमा और दक्षिणा जिसका काम प्रत्येक देवता को उसका भाग वितीर्ण करना रहा है। ऋग्वेद के दो स्थानों पर मही, सरस्वती और इला का त्रिस्तोः देवी के रूप में उल्लेख हुआ है। [10] ऋग्वेद के एक अन्य सूत्र में उपर्युक्त तीन देवियों के साथ भारती, सरस्वती इला और मही का वर्णन किया गया है। [11] प्राचीन काल में इन्हें त्रिस्थानस्थ वाक् की प्रतिनिधि देवियाँ माना गया है। आचार्य शौनक के अनुसार यह त्रिविध देवियाँ (दिव्य, अन्तरिक्ष, स्थानीय तथा पार्थिव) की ज्योतियों में निहित है। इसीलिए इन्हें त्रिविध नामों से व्यक्त किया गया है।[12] शौनक ने इन देवियों को त्रिस्थानीय वाक् से समीकृत किया है– इला पार्थिव वाक् की देवी है। मध्यम से संबंध सरस्वती मध्यम वाक् की देवी है। भारती दिव्य लोक में स्थित है और दिव्य वाक् की प्रतिनिधि है।[13]

वैदिक ऋचाओं में देवताओं के साथ ही साथ उनकी शक्तियों का दिग्दर्शन प्राप्त होता है। [14] देवी सूक्त तथा रात्रि सूक्त वैदिक काल में शक्ति के स्वरूप और उसकी उपासना पद्धति को प्रस्तुत करने वाले है। देवी सूक्त[15] में आद्याशक्ति की स्तुति की गई है, जिसे शाक्त धर्म के मूल आधार के रूप में मान्य किया गया है। इस सूक्त में अम्मृग ऋषि की पुत्री वाक् ब्रह्म साक्षात्कार से सम्पन्न होकर अपनी सर्वात्म दृष्टि को अभिव्यक्त कर रही है। ब्रह्मविद् की वाणी ब्रह्म से तादात्म्यापन्न होकर अपने आपको ही सर्वात्मा के रूप में वर्णन किया है। इस सूक्त में प्रतिपाद्य–प्रतिपादक का ऐकात्म्य संबंध स्थापित किया गया है। ऋग्वेद में रात्रि सूक्त में भी रात्रि देवी को समस्त जगत का सृष्टिकर्त्ता, समस्त जीवों का शुभाशुभपल देखनेवाली कहा गया है। [16] वैदिक साहित्य में अदिति और पृथ्वी को देवताओं की कोटि में रखकर आद्यशक्ति की प्रतिष्ठा की गई है। विश्व की मूलभूत चित्शक्ति ही अदिति है और वहीं देवों की माता का रूप है। यही एक इला; भारती और सरस्वती इन तीनों देवियों के रूप में विभक्त हो जाती है। वेदों में जिसे वाक् कहा गया है, वह भी देवी या शक्ति का ही रूप है। वसु, इन्द्र, आदित्य इन तीनों देवों या त्रिक के रूप में उस शक्ति का संचरण होता है। मित्र, वरूण, इन्द्र, अग्नि आदि जितने प्रधान देव है, उन सभी को जन्म देनेवाली मूलभूत शक्ति देवमाता अदिति है। [17]

निष्कर्ष :

शाक्त उपनिषदों की दूसरी महत्वपूर्ण जो विशेषता परिलक्षित होती है, वह है प्रचुर मात्रा में तांत्रिक शब्दावलियों का व्यवहार। कतिपय शाक्त उपनिषद तो पूर्णरूपेण तंत्र ही है। त्रिपुर पाविनी उपनिषद् में तंत्र के रहस्यात्मक एवं पारिभाषिक शब्द, बिन्दु, नाद, रजस, बीज, स्थान, शक्ति, मंत्र, यंत्र, चक्र और तारक आदि का व्यवहार पाया जाता है। इन शाक्त उपनिषदों में तांत्रिक पारिभाषिक शब्दावलियों पर वेदान्तक प्रभाव परिलक्षित होता है। शाक्त उपनिषदों में पारिभाषिक तांत्रिक शब्दावलियों के व्यवहार से ऐसा प्रतीत होता हे कि सामान्य जीवन में एवं प्रतिदिन के व्यवहार में आनेवाली उपासना पद्धति का लोगों के द्वारा दार्शनिक रूप प्रदान करने का प्रयास किया गया है। इसकी व्याख्या इन सन्दर्भो में की जा सकती है कि तंत्रवाद ने किस प्रकार वेदान्तिक चिंतन को प्रभावित किया और उस उपासना पद्धति में प्रतीकोपासना पद्धति को अपनाया गया। शाक्त उपनिषदों के पर्यावलोचन से ऐसा प्रतीत होता है कि पौराणिक शाक्त धर्म के लिए शाक्त उपनिषदों ने आधारशिला स्थापित किया। सम्पूर्ण पौराणिक शाक्त साहित्य पर औपनिषदिक शक्ति और उसके एक एवं अनेकत्व रूप का प्रभाव परिलक्षित होता है।

संदर्भ–संकेत :

1. भारतीय मूर्त्तिवला– पृ0–320।
2. मोहनजोदड़ो एण्ड इण्डस सिविलाईजेशन, भाग–1, पृ0–57।
3. वही,पृ0–50।
4. सिन्धु सभ्यता, पृ0–50।
5. सिन्धु सभ्यता, पृ0–38।
6. महाभारत–विराट पर्व, अध्याय–60, भीष्मपर्व, अध्याय–23।
7. हरिवंश पुराण–द्वितीय, विष्णुपर्व, अध्या–2–4 एवं 22।
8. उपपुराण स्टडीज,द्वितीय, पृ0–17।
9. ऋग्वेद–5/45/7–8।
10. वेदरहस्य पूर्वार्द्ध, पृ0–29–30।
11. ऋग्वेद–1/13/9.5/5/8।
12. वही–9/5/8। त्र
13. 33. वृहद्देवता–3/12।
14. 44. वही–3/13/14।
15. वेदरहस्य (पूर्वार्द्ध), पृ0–30।
16. ऋग्वेद–10/25/1–8।
17. ऊँ रात्रि व्यस्व्य दायती; पुरूत्रा देव्यक्षभिः विश्वाअधिश्रियोधित।–ऋग्वेद–10/127/1।